ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 232**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

बौद्ध युगीन आर्थिक विकास में गृहपतियों की भूमिका

डॉ0 शशिकांत प्रताप सिंह

प्रा. इतिहास, शिवलोक श्री नेत्र महाविद्यालय पड़री, मिर्जापुर (उ0प्र0) भारत

Received-19.05.2025, Revised-26.05.2025, Accepted-30.05.2025 **E-mail : amriteshawasthi@gmail.com**

सारांशः बौद्ध युग में समाज की आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में गृहपतियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है, ये गृहपति संपूर्ण उत्पादन के क्षेत्र पर किसी न किसी रूप से अपना स्वामित्व बनाये हुए थे, परंतु ये राज्य का पूर्ण सहयोग करते थे। उस समय की यह एक विशेषता थी कि वस्तुओं का मूल्य निर्धारण लाभ को दृष्टि में रखकर व्यापारी स्वयं नहीं करता था, इससे सामान्य जन को उचित मूल्य पर वस्तुएं प्राप्त होती थी।

कुंजीभूत शब्द– बौद्ध, आर्थिक विकास, गृहपति, स्वामित्व, मूल्य निर्धारण, आर्थिक व्यवस्था, प्रतिष्ठामय, व्यापार–समिति

बौद्ध आगम में हम यह देखते हैं कि प्राचीन भारत के आर्थिक विकास में इन गृहपतियों का महत्वपूर्ण योगदान था। भारत को धन–धान्य से युक्त बनाने के लिए इन लोगों ने कठिन से कठिन कार्य करने में कुछ भी संकोच नहीं किया। इनके जीवन का उद्देश्य ही प्रतिष्ठामय शिल्प का ज्ञाता होना, भौतिक योग्य पदार्थो का संग्रह करना एवं गृहस्थी का कार्य संपन्न करने का था।[1] ये दूर–दूर तक जाकर व्यापार कार्य करते तथा रत्नों एवं धातुओं का संग्रह करते थे।[2] व्यापारी वर्ग व्यापार को समुचित ढंग से चलाने के लिए व्यापार–समितियो का निर्माण करते थे। ये व्यापार–समितियां इनके व्यापार में सहायक सिद्ध होती थी।[3]

प्रायः गृहपति लोग मूल्यो का निर्धारण स्वयं नहीं करते थे यह इनकी एक विशेषता थी। उनकी धारणा थी कि वस्तुओं का मूल्य निश्चित करना वैसा ही है जैसा मनुष्यों का प्राण लेना होता है। ये निश्चित किए गए मूल्य पर सौदा बेचते थे।[4] बाहर का आया हुआ व्यापारी भी स्वयं मूल्य निश्चित नहीं करता था, वह भी सरकारी कर्मचारी अर्धकारक द्वारा निश्चित किए हुए मूल्यों पर ही अपने सामानों को बेचता था। उस समय की यह एक विशेषता थी कि वस्तुओं का मूल्य निर्धारण लाभ को दृष्टि में रखकर व्यापारी स्वयं नहीं करता था, इससे सामान्य जन को उचित मूल्य पर वस्तुएं प्राप्त होती थी। यह अवश्य था कि गृहपति– जन लाभ की दृष्टि से ही व्यापार करते थे, किंतु उनका दृष्टिकोण सामान्य जन के हित में ही निहित था।

बौद्ध आगमों से यह भी पता चलता है कि तत्कालीन समय में गृहपतियों के नाम उनके पूरे धन के मूल्यों पर था। महाबोधि जातक में 80 करोड़ धन वाले महासारवान उदीच्य[5] या 18 करोड़ धन वाले सेठ[6] का उल्लेख प्राप्त होता है और इन लोगों को सेट्ठिक7, वर्णिक आदि उपाधियों से संबोधित किया गया है।

ये गृहपति लोग आशा युक्त हुआ करते थे। ये अपने विचारों के प्रति दृढ़ और कर्मठ हुआ करते थे। आशा से प्रेरित होकर धन की खोज में यत्र तत्र आते जाते थे। ये नौकाओ पर चढ़कर समुद्र की यात्रा करते थे, कभी–कभी वे इस दुर्गम यात्रा में डूब भी जाते और धन विहीन होकर विनाश को प्राप्त होते8 परंतु ये अपने संकल्पों से विचलित नहीं होते थे। आर्थिक संदर्भो में लेनदेन की प्रक्रिया प्रचलन में थी। इस प्रक्रिया में लोग ऋण देकर, सूद लेकर जीविका चलाते थे। सूद से जीविका चलाने वालों का बौद्ध साहित्य में विरोध किया गया है। महाकण्ह जातक में राजा के पूछने पर देवराज शक्र द्वारा कही गई गाथा को शिकारी बताता है– जो ऋण देकर उसके सूद से जीविका चलाएंगे तब उन्हें मार कर यहां मेरा कुत्ता मुक्त होगा।[9]

इस प्रकार बौद्ध साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है की तत्कालीन समाज की आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में गृहपतियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है, ये गृहपति संपूर्ण उत्पादन के क्षेत्र पर किसी न किसी रूप से अपना स्वामित्व बनाये हुए थे, परंतु ये राज्य का पूर्ण सहयोग करते थे। एक बार 80 करोड़ वाला गृहपति राज परिवार से सम्मानित हुआ उसे श्रेष्ठी का पद मिला।[10] इस प्रकार ये राज परिवार के सहयोग से ही कार्य करते थे।

उस समय यह एक धारणा बनी हुई थी कि अधर्म से जीविका चलाने की अपेक्षा पात्र लेकर अनागारिक होकर भिक्षावृत्ति से जीविका चलना ही अच्छा है। साथ ही यह भी विचार था कि ऐसे ऐश्वर्यलाभ तथा धन लाभ को धिक्कार है जो नर्क गामी कर्म या अधर्म आचरण से मिले।[11] इससे पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि समाज में लोग धर्म के माध्यम से ऐश्वर्यलाभ या धन लाभ करते थे। इसलिए यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज के आर्थिक जीवन में भ्रष्टाचार कम था। यह सत्य था कि उस समय भी समाज में गरीब और अमीर दो वर्ग थे और गरीबों की स्थिति सोचनीय थी[12], परंतु आर्थिक जीवन में भी ईमानदारी कम नहीं थी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. अंगुत्तर निकाय, भाग–3,पृ.70।
2. जातक, भाग–1, 2ध्187, जातक, भाग –4, 463ध्340 ।
3. जातक, भाग–4, 463ध्559 ।
4. जातक, भाग–1, 1ध्176–77 ।
5. जातक, भाग–5, 528ध्312 ।
6. जातक, भाग–6, 540ध्78 ।
7. जातक, भाग–5, 535ध्466 ।
8. जातक, भाग–5, 435ध्486 ।
9. जातक, भाग–4, 469ध्382 ।
10. जातक, भाग–5, 535ध्466 ।
11. जातक, भाग–4, 433ध्177 ।
12. अंगुत्तरनिकाय निकाय,भाग–2,पृ.85 ।

*****